सुपरिंटिंग इंजीनियर और अन्य

बनाम

बी. सुब्बा रेड्डी

अप्रैल 26,1999

[डी. पी. वाधवा और एन. संतोश हेगड़े, जे. जे.]

सिविल प्रक्रियात्मक संहिता, 1908-O आरडर 41 नियम 22-मध्यस्थता अधिनियम, 1940-खंड 41 और 39-दूसरी अपील में प्रति-आपत्तियों को दाखिल करना संदर्भ से पहले की अवधि के लिए हर्जाने के रूप में मंजूर किया गया-पुरस्कार की कुल राशि, अर्नेस्ट मनी डिपॉजिट और हर्जाने पर 18 प्रतिशत प्रति वर्ष का अतिरिक्त ब्याज दिया गया-विचारण निचली अदालत ने निचली अदालत का पुरस्कार नियम बनाया और प्रत्यर्थी ठेकेदार द्वारा दी गई ब्याज को 18 प्रतिशत प्रति वर्ष से घटाकर 12 प्रतिशत कर दिया-अपीलकर्ता ने उच्च निचली अदालत में अपील दायर की जिसमें प्रत्यर्थी ने निचली अदालत के आदेश को चुनौती देते हुए प्रति-आपत्तियां दायर कीं-उच्च निचली अदालत ने अपील को खारिज कर दिया लेकिन प्रति-आपत्तियों की अनुमति दी-अपील पर आयोजित, प्रति-आपत्ति

अपीलार्थी और प्रत्यर्थी ने चार समझौते किए थे जो विवाद का विषय थे। प्रत्यर्थी के दावों के अलावा, चार पुरस्कारों की एक श्रृंखला में मध्यस्थता ने दावों के भुगतान में देरी के लिए हर्जाना दिया, जिसकी गणना प्रति वर्ष 15 प्रतिशत की दर से की गई थी।उत्तरदाता को पुरस्कार की कुल राशि, अर्नेस्ट मनी डिपॉजिट, बैंक गारंटी और संदर्भ की तारीख से भुगतान तक, जो भी पहले हो, उक्त नुकसान पर 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज दिया गया। प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश के आदेश पर सभी पुरस्कारों पर दिए जाने वाले ब्याज को 18 प्रतिशत से घटाकर 12 प्रतिशत कर दिया

गया।प्रतिवादी-ठेकेदार ने इसके खिलाफ अपील नहीं की। हालाँकि, अपीलकर्ता ने मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की खंड 39 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष एक अपील दायर की। इसके बाद प्रत्यर्थी ने प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश के आदेश को चुनौती देते हुए आदेश 41 नियम 22 सी. पी. सी. के तहत प्रति-आपत्ति दायर की। उच्च न्यायालय ने अपील को खारिज कर दिया लेकिन प्रति वर्ष 18 प्रतिशत ब्याज देने वाले मध्यस्थ के आदेश को बहाल करने वाली प्रति-आपत्तियों को स्वीकार कर लिया। इसलिए यह अपील की गई है।

अपीलार्थियों ने इस अदालत के समक्ष तर्क दिया कि अधिनियम की खंड 41 के तहत प्रति-आपत्तियां बनाए रखने योग्य नहीं थीं, और मध्यस्थ संदर्भ से पहले की अवधि के लिए ब्याज नहीं दे सकता था।

प्रत्यर्थी ने इस अदालत के समक्ष तर्क दिया कि चूंकि सी. पी. सी. के प्रावधान अधिनियम की खंड 39 के तहत दायर अपील पर लागू होते हैं, इसलिए परस्पर आपत्तियां भी कायम रखी जा सकती हैं।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया

1. अपील एक मौलिक अधिकार है और अधिनियम का निर्माण है।अपील करने का अधिकार तब तक मौजूद नहीं है जब तक कि इसे विशेष रूप से प्रदान नहीं किया जाता है। क्रॉसऑब्जेक्शन एक अपील की तरह है जिसमें अपील के सभी अंश होते हैं। यह ज्ञापन के रूप में दायर किया जाता है और आदेश 41 नियम 1 सी. पी. सी. के प्रावधान, जहां तक ये अपील का ज्ञापन के रूप और सामग्री से संबंधित हैं, प्रति-आपत्ति पर भी लागू होते हैं। अदालती शुल्क अपील का ज्ञापन पर इस तरह से प्रति-आपत्ति पर देय होता है। एक गरीब व्यक्ति द्वारा अपील से संबंधित प्रावधान प्रति-आपत्ति पर भी लागू होते हैं। यहां तक कि जहां अपील वापस ले ली जाती है या चूक के लिए खारिज

कर दी जाती है, फिर भी प्रति-आपत्ति की सुनवाई और निर्धारण किया जा सकता है। यद्यपि प्रत्यर्थी ने अपील नहीं की है, वह किसी अन्य आधार पर डिक्री का समर्थन कर सकता है, लेकिन यदि वह इसे संशोधित करना चाहता है तो उसे डिक्री पर प्रति-आपत्ति दर्ज करनी होगी जो आपत्तियां वह अपील दायर करके पहले ले सकता था।प्रति-आपत्ति एक अपील के अलावा और कुछ नहीं है।[893-सी)

साधु गंजाराम भागड़े बनाम विशेष डिप्टी कलेक्टर, [1970] जे. एस. सी. सी. 685; अलोपी नाथ बनाम कलेक्टर, वाराणसी, (1986) सप्लि एस. सी. सी. 693; एच. एम. कमालुद्दीन अंसारी एंड कंपनी बनामभारत संघ, [1983) 4 एस. सी. सी. 417; हाकम 9. बनाम गैमन (इंडिया) लिमिटेड, (1971) 1 एस. सी. सी. 286; एन. जयराम रेड्डी बनाम राजस्व मंडल अधिकारी और भूमि अधिग्रहण अधिकारी, [1979) 3 एस. सी. सी. 578; आर. मैक डिल एंड कंपनी (पी) लिमिटेड बनाम।गौरी शंकर सारदा, [1991) 2 एस. सी. सी. 548; रमनभाई आशाभाई पटेल बनाम डाभी अजीत कुमार फुलसिंजी, (1965) 1 एस. सी. आर. 712 और भानु कुमार शास्त्री बनाम मोहन लाल सुखुदी, (1971) 1 धारा 370 पर भरोसा किया।

रामसरय सिंह बनाम बिभीसन सिन्हा, आकाशवाणी (1950) काल। 372 और बिहार राज्य विद्युत बोर्ड बनाम खालसा ब्रदर्स, ए. आई. आर. (1988) पैट 304, विशिष्ट।

2. मध्यस्थता अधिनियम की खंड 41 केवल प्रक्रियात्मक प्रकृति की है। यदि अधिनियम की खंड 39 के तहत प्रति-आपत्ति का कोई प्रावधान नहीं है, तो इसे खंड 41 में नहीं पढ़ा जा सकता है क्योंकि प्रति-आपत्ति दर्ज करना प्रक्रियात्मक प्रकृति का नहीं है। खंड 41 केवल यह निर्धारित करती है कि सी. पी. सी. की प्रक्रिया अधिनियम की खंड 39 के तहत अपील पर लागू होगी। इसलिए, प्रत्यर्थी द्वारा दायर क्रॉसऑब्जेक्शन उच्च न्यायालय में बनाए रखने योग्य नहीं था।(887-एफ)

3. मध्यस्थ ने वास्तव में ब्याज दिया है, हालांकि विवाद के संदर्भ की तारीख से पहले की अवधि के लिए हर्जाने के रूप में। संदर्भ से पहले की अवधि के लिए ब्याज केवल तभी दिया जा सकता है जब कोई समझौता हो या यह 1978 के ब्याज अधिनियम के तहत स्वीकार्य हो। इसे दिखाने के लिए रिकॉर्ड पर कुछ भी नहीं है, इसलिए, हर्जाने के पुरस्कार को अलग रखा जाना चाहिए।(884-जी]

सचिव सिंचाई विभाग, उड़ीसा सरकार बनाम जी. सी. रॉय, (1992) 1 एस. सी. सी. 508; हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड बनाम.जम्मू और कश्मीर राज्य, ए. आई. आर. (1992) एस. सी. 2192 और उड़ीसा राज्य बनाम अग्रवाल, (1997) 2 धारा 469 पर निर्भर था।

4. पुरस्कार उस सीमा तक जो संदर्भ से पहले की अवधि के लिए 15 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के रूप में हर्जाना देता है, अलग रखा जाता है; विचारण न्यायालय द्वारा घोषित 12 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज का पुरस्कार बहाल किया जाता है।[894-सी)

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयःसिविल अपील सं. 451-58/1994।

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के ए. ए. ओ सं. 5, 386, 493 और 1268/90 सी. आर. पी. सं. 1135, 1136, 1134 और 818/1990 के निर्णय और आदेश में दिनांकित 23.12.92 से।

अपीलार्थियों की ओर से श्रीमती के. अमरेश्वरी, सुश्री अनामेका, जी. प्रभाकर और जी. वेंकटेश।

प्रत्यर्थी की ओर से श्रीमती डी. भारती रेड्डी।

न्यायालय का निर्णय डी. पी. वाधवा जे. द्वारा दिया गया था

यह अपील मध्यस्थता अधिनियम, 1940 (संक्षेप में, 'अधिनियम') से उत्पन्न कार्यवाही में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की एक खण्ड पीठ के 23 दिसंबर, 1992 के फैसले के खिलाफ है, जहां उच्च न्यायालय ने मध्यस्थ द्वारा दिए गए न्यायालय के नियम के अनुसार निर्णय दिया था।उच्च न्यायालय ने अधीक्षण अभियंता द्वारा दायर अपील को खारिज कर दिया, जो अब पहले की तरह ही अपीलकर्ता है और प्रतिवादी ठेकेदार की प्रति-आपत्तियों को स्वीकार कर लिया।

अपीलार्थी की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता श्रीमती के. अमरेश्वरी ने दो आपत्तियाँ उठाई हैंः(।) अधिनियम की खंड 41 के तहत प्रति-आपत्तियां बनाए रखने योग्य नहीं हैं; और (2) मध्यस्थ उसे विवादों के संदर्भ से पहले की अवधि के लिए ब्याज नहीं दे सकता था। इतना ही नहीं मध्यस्थ ब्याज पर ब्याज देता था जिसे करने का उसे कोई अधिकार नहीं था।

अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी के बीच कार्य के निष्पादन के लिए एक समझौता किया गया था जिसे "के. एम. 0-0-008 से 1-00-004 के. एम. तक एन. एस. नहरों की पामिडीपाडु शाखा नहर के किनारे और किनारे की ढलानों को प्रदान करना" कहा जाता है। चार अलग-अलग समझौते किए गए। हमेशा की तरह ऐसे अनुबंधों में विवाद उत्पन्न होते थे और इन्हें एकमात्र मध्यस्थ के पास भेजा जाता था, जिन्होंने प्रत्येक समझौते के संबंध में 18 अप्रैल, 1986 को अलग-अलग पुरस्कार दिए थे।-

एस. आई. सं	समझौते की संख्या	दी गई राशि
1. ए. एस	सं. 8/एस. ई., दिनांक 20-5-82	रु. 3,73,486 + अंतिम बिल, रोकी गई राशि और हर्जाने के साथ।
2. ए. एस	सं.9/एस.ई.,दिनांक	रु. 4,08,377 + अंतिम

	20.5.82	बिल, धारित राशि और हर्जाने के साथ।
3. ए. एस	सं 10/ओ./एस. ई. दिनांक 20.5.82 (कार्य निष्पादित नहीं किया गया)	रु. 1,23,250 + ई.एम.डी. बैंक गारंटी और नुकसान।
4. ए. एस	सं. 11/एस. ई., दिनांक 20.5.82 (कार्य निष्पादित नहीं किया गया)	रु. 1,23,250 + ई.एम.डी. बैंक गारंटी और नुकसान।

साथ ही, पुरस्कार ने इस तरह से दी गई राशि पर 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान करने का भी निर्देश दिया।

प्रतिद्वंद्वी विवादों को समझने के लिए, हम समझौता संख्या 11/एस. ई. (ऊपर क्रम संख्या 4) में से किसी एक पुरस्कार का उल्लेख कर सकते हैं। मध्यस्थ ने प्रतिवादी के पाँच दावों की अनुमति दी और ये हैंः

एस. आई. सं.	दावे	दावा की गई राशि	दी गई राशि
1.	श्रम के लिए अग्रिम के नुकसान की ओर	रु. 40, 000	रु. 40, 000
2.	मशीनरी और चालक दल पर अग्रिम नुकसान की ओर	रु. 30, 000	रु. 20, 000
3.	ओवर-हेड शुल्कों की ओर	रु. 10, 000	रु. 5, 000

4.	लाभ का नुकसान	रु. 40, 000	रु. 20, 000
5.	चार दावों के तहत भुगतान में देरी से नुकसान	रु. 28, 800 रु. 21, 600 रु. 7, 200 और रु. 28, 800	रु. 38, 250

श्री अमारेश्वरी ने 1,2,3 और 4 के दावों पर पुरस्कार को चुनौती नहीं दी। उसने कहा कि दावा संख्या 5 अस्वीकार्य था। हम इस बात पर ध्यान दें दे सकते हैं कि मध्यस्थ कैसे सक्रिय हुआ। रुपये 38,250 के आंकड़े पर दावा संख्या 5 के तहत उन्होंने अभिनिर्धारित किया कि दावों 1,2,3 और 4 के तहत अनुमत दावों की कुल राशि रु. 85, 000 अनुबंध पूरा होने की तारीख 21.10.1982 थी। विवादों के संदर्भ की तारीख 21.10.1985 थी। उन्होंने पुरस्कार दिया। प्रति वर्ष 15 प्रतिशत की दर से नुकसान के उपाय के रूप में रु. 85, 000 तीन साल के लिए 21.10.1982 से संदर्भ की तारीख, यानी 21.10.1985 तक मध्यस्थ ने आगे उत्तरदाता को 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से रुपये की कुल राशि पर ब्याज दिया। 85, 000 ई. एम. डी. (अर्नेस्ट मनी डिपॉजिट), बी. जी. (बैंक गारंटी) और आर 38,250 (हर्जाना होने के नाते), संदर्भ की तारीख से वास्तविक भुगतान या डिक्री की तारीख तक, जो भी पहले हो।

हम पाते हैं कि दावा संख्या 5 के तहत मध्यस्थ ने जो नुकसान के रूप में दिया है, वह वास्तव में रुपये की राशि पर ब्याज है। रुपये 85, 000 की राशि उसे विवादों के संदर्भ की तारीख से पहले की अवधि के लिए। 38, 251) और कुछ नहीं बल्कि उसे विवादों के संदर्भ की तारीख से पहले की अवधि के लिए ब्याज है। संदर्भ से पहले की अवधि के लिए ब्याज केवल तभी दिया जा सकता है जब कोई समझौता हो या यह ब्याज अधिनियम, 1978 के तहत स्वीकार्य हो, रिकॉर्ड पर यह दिखाने के लिए कुछ भी

नहीं है कि प्रतिवादी समझौते के तहत या ब्याज अधिनियम के तहत ब्याज का दावा कैसे कर सकता है। हर्जाने का नाम देकर, जब वास्तव में यह ब्याज का दावा है तो इसकी अनुमति नहीं दी जा सकती है।एक लाख रुपये का पुरस्कार। 38, 250 को नुकसान के रूप में अलग रखा जाना है।

सचिव, सिंचाई विभाग, उड़ीसा सरकार बनाम जी. सी. मामले में इस न्यायालय के निर्णय को देखते हुए। रॉय, [1992] आई एस. सी. सी. 508; हिंदुस्तान कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड बनाम.जम्मू और कश्मीर राज्य, ए. आई. आर. (1992) एस. सी. 2192, और नवीनतम उड़ीसा राज्य बनाम बी. एन. अग्रवाल (1997) 2 एस. सी. सी. 469, मध्यस्थ लटकन और भविष्य दोनों पर ब्याज दे सकता था जो उसने प्रति वर्ष 18 प्रतिशत की दर से दिया था।

जब मामला प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश के समक्ष लंबित था, तो उन्होंने ब्याज के अधिनिर्णय को 18 प्रतिशत प्रति वर्ष से घटाकर 12 प्रतिशत प्रति वर्ष कर दिया। अन्यथा उन्होंने न्यायालय के सभी चार पुरस्कार नियम बनाए और उनके संदर्भ में आदेश पारित किए।प्रत्यर्थी ने प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा 12 प्रतिशत प्रति वर्ष की कम दर पर ब्याज देने को चुनौती नहीं दी और अपने फैसले के खिलाफ कोई अपील दायर नहीं की।यह अपीलकर्ता ही था, जिसने प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील की थी।जब प्रत्यर्थी अपील का नोटिस दी गई, तो उसने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 नियम 22 (संक्षेप में, 'संहिता') के तहत प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश के फैसले को चुनौती देते हुए प्रति-आपत्ति दायर की, जिसके तहत ब्याज के पुरस्कार में हस्तक्षेप किया गया था। उच्च न्यायालय ने अपीलों को खारिज करते हुए प्रति-आपत्तियों को स्वीकार कर लिया और मध्यस्थ द्वारा दी गई 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के अधिनिर्णय को बहाल कर दिया।अब अपीलकर्ता का कहना है कि उच्च न्यायालय ऐसा नहीं कर सकता था क्योंकि

अधिनियम की खंड 39 के तहत अपीलकर्ता द्वारा दायर अपील में प्रति-आपत्तियां सक्षम नहीं थीं। हालाँकि, प्रत्यर्थी का कहना है कि चूंकि संहिता के प्रावधान अधिनियम की खंड 39 के तहत दायर अपील पर लागू होते हैं, इसलिए आदेश 41 नियम 22 के तहत दायर की गई प्रति-आपत्ति बनाए रखने योग्य है।अधिनियम की धारा 39 और 41 और संहिता के आदेश 41 नियम 22 के प्रावधान इस प्रकार हैंः

"मध्यस्थता अधिनियम

39. अपील योग्य आदेशः- (1) इस अधिनियम के तहत पारित निम्नलिखित आदेशों (और किसी अन्य से नहीं) से आदेश पारित करने वाले न्यायालय के मूल फरमानों से अपील सुनने के लिए कानून द्वारा अधिकृत न्यायालय में अपील की जाएगी।

एक आदेश -

(i) मध्यस्थता का स्थान लेना;

(ii) एक विशेष मामले के रूप में बताए गए पुरस्कार पर;

(iii) किसी पुरस्कार में संशोधन या सुधार करना।

(iv) मध्यस्थता समझौता दायर करना या करने से इनकार करना;

(v) जहां मध्यस्थता समझौता है, वहां कानूनी कार्यवाही पर रोक लगाने या रोकने से इनकार करना;

(vi) किसी पुरस्कार को अलग रखना या अलग रखने से इनकार करनाः

बशर्ते कि इस खंड के प्रावधान लघु कारण न्यायालय द्वारा पारित किसी भी आदेश पर लागू नहीं होंगे।

(2) इस खंड के तहत अपील में पारित आदेश से कोई दूसरी अपील नहीं होगी, लेकिन इस खंड में कुछ भी सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने के किसी भी अधिकार को प्रभावित या छीन नहीं लेगा।

41. न्यायालय की प्रक्रिया और शक्तियाँ- इस अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियमों के प्रावधानों के अधीन -

(क) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) के प्रावधान, न्यायालय के समक्ष सभी कार्यवाहियों और इस अधिनियम के तहत सभी अपीलों पर लागू होंगे; और

(ख) न्यायालय के पास, मध्यस्थता कार्यवाही के प्रयोजन के लिए और उसके संबंध में, दूसरी अनुसूची में निर्धारित किसी भी मामले के संबंध में आदेश देने की वही शक्ति होगी जो उसके पास न्यायालय के समक्ष किसी भी कार्यवाही के उद्देश्य और उसके संबंध में है।

बशर्ते कि खंड (ख) की किसी भी बात को किसी ऐसी शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालने के लिए नहीं लिया जाएगा जो ऐसे मामलों में से किसी के संबंध में आदेश देने के लिए मध्यस्थ या अंपायर में निहित हो।

सिविल प्रक्रिया संहिता

22. सुनने पर प्रत्यर्थी डिक्री पर आपत्ति कर सकता है जैसे कि उसने अलग अपील को प्राथमिकता दी हो।-(1) कोई भी प्रत्यर्थी, हालाँकि उसने किसी से अपील नहीं की होगी। डिक्री का हिस्सा, न केवल डिक्री का समर्थन कर सकता है, बल्कि मेरा यह भी कहना है कि किसी भी मुद्दे के संबंध में नीचे दिए गए न्यायालय में उसके खिलाफ निर्णय उसके पक्ष में होना चाहिए था; और डिक्री पर कोई भी प्रति-आपत्ति भी ले सकता है।जिसे वह अपील के माध्यम से ले सकता था, बशर्ते कि उसने अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित दिन की सेवा की तारीख से एक महीने के भीतर या ऐसे

आगे के समय के भीतर अपील न्यायालय में ऐसी आपत्ति दायर की हो, जिसे अपील न्यायालय अनुमति देना उचित समझे।

स्पष्टिकरण-जिस निर्णय के खिलाफ अपील की गई डिक्री आधारित है, उसमें न्यायालय के किसी निष्कर्ष से व्यथित प्रतिमुकदमाी, इस नियम के तहत, डिक्री के संबंध में जहां तक वह उस निष्कर्ष पर आधारित है, प्रति-आपत्ति दायर कर सकता है, इसके बावजूद कि किसी अन्य निष्कर्ष पर न्यायालय के निर्णय के कारण जो मुकदमे के निर्णय के लिए पर्याप्त है, डिक्री, पूरी तरह से या आंशिक रूप से, उस प्रतिमुकदमा के पक्ष में है।

(2) आपत्ति का रूप और उस पर लागू प्रावधान।-इस तरह की प्रति-आपत्ति एक ज्ञापन के रूप में होगी, और नियम 1 के प्रावधान, जहां तक वे अपील का ज्ञापन के प्रपत्र और सामग्री से संबंधित हैं, उस पर लागू होंगे।

(3) जब तक प्रत्यर्थी आपत्ति के साथ उस पक्ष से एक लिखित पावती दाखिल नहीं करता है जो ऐसी आपत्ति से प्रभावित हो सकता है या उसके वकील को उसकी एक प्रति प्राप्त हुई है, तब तक अपील न्यायालय आपत्ति दर्ज करने के बाद जितनी जल्दी हो सके, ऐसे पक्ष या उसके वकील को प्रत्यर्थी की कीमत पर एक प्रति प्रदान करेगा।

(4) जहाँ, किसी भी मामले में जिसमें किसी प्रतिवादी ने इस नियम के तहत आपत्ति का ज्ञापन दायर किया है, मूल अपील वापस ले ली जाती है या चूक के लिए खारिज कर दी जाती है, फिर भी इस तरह से दायर की गई आपत्तियों को अन्य पक्षों को ऐसी सूचना के बाद सुना और निर्धारित किया जा सकता है जो न्यायालय उचित समझता है।

(5) निर्धन व्यक्तियों की अपीलों से संबंधित प्रावधान, जहाँ तक उन्हें लागू किया जा सकता है, इस नियम के तहत किसी आपत्ति पर लागू होंगे।

अदालत शुल्क प्रति-आपत्ति पर देय होता है जैसा कि अपील पर देय होता है।

श्रीमती अमरेश्वरी द्वारा यह तर्क दिया गया कि अधिनियम की खंड 41 प्रत्यर्थी को प्रति-आपत्ति दायर करने का कोई ठोस अधिकार प्रदान नहीं करती है और यह केवल संहिता की प्रक्रिया है जो अधिनियम की खंड 39 के तहत दायर अपील पर विचार करते समय लागू की जाती है। इस बारे में कि प्रति-आपत्ति का दायरा क्या है, चाहे वह एक मूल अधिकार हो या केवल प्रक्रियात्मक, हम बार में उद्धृत कुछ निर्णयों का उल्लेख कर सकते हैं।

सहदु गंगाराम भागड़े बनाम विशेष उप-कलेक्टर अहमदनगर और अन्य, [1970] 1 एस. सी. सी. 685, यह न्यायालय बॉम्बे न्यायालय शुल्क अधिनियम, 1959 के तहत अदालत शुल्क के भुगतान के संदर्भ में प्रति-आपत्तियों की प्रकृति के प्रश्न पर विचार कर रहा था।यह प्रस्तुत किया गया था कि उक्त अधिनियम की अनुसूची 1 का अनुच्छेद 3 लागू नहीं था क्योंकि उस लेख में "मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के अलावा किसी भी पुरस्कार को अलग करने या संशोधित करने के लिए शिकायत, आवेदन या याचिका (अपील के ज्ञापन सहित)" का उल्लेख किया गया था और यह कि प्रति-आपत्तियों पर कोई अदालत शुल्क देय नहीं था।इस न्यायालय ने निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया

"अनुसूची 1 के अनुच्छेद 3 को आकर्षित करने से पहले, (1) एक शिकायत, आवेदन या याचिका (अपील के ज्ञापन सहित) होनी चाहिए; (2) उस शिकायत, आवेदन या याचिका (अपील के ज्ञापन सहित) में, किसी भी पुरस्कार को अलग करने या संशोधित करने के लिए प्रार्थना होनी चाहिए; और (3) विचाराधीन पुरस्कार मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के तहत नहीं होना चाहिए।इस बात में कोई विवाद नहीं है कि इस मामले में हम जिन कार्यवाहियों से संबंधित हैं, वे ऊपर उल्लिखित तीन आवश्यकताओं

में से दो को पूरा करती हैं। कार्यवाहियों में संबंधित पुरस्कार मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के तहत नहीं दिया गया है और अपनी क्रॉसऑब्जेक्शन द्वारा से अपीलकर्ता पुरस्कार को संशोधित करना चाहता है। विवाद में एकमात्र बिंदु यह है कि क्या अपीलकर्ता द्वारा दायर प्रति-आपत्ति को अनुसूची । के अनुच्छेद 3 के अर्थ के भीतर "आवेदन या याचिका" के रूप में माना जा सकता है। दूसरे शब्दों में 'याचिका' शब्द में अपील का ज्ञापन भी शामिल है। सवाल यह है कि क्या किसी अपील में प्रतिवादी द्वारा दायर प्रति-आपत्ति को अपील का ज्ञापन माना जा सकता है। हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह सार में अपील का ज्ञापन है, हालांकि रूप में नहीं।यह अपील के तहत आदेश को चुनौती देने के लिए एक अपील में प्रतिवादी को दिया गया अधिकार है, जिस हद तक वह उस आदेश से व्यथित है। क्रॉसऑब्जेक्शन का ज्ञापन अपील का एक रूप है। यह एक क्रॉस अपील की जगह लेता है।यह सच है कि जबकि अनुसूची 1 का अनुच्छेद 1 'क्रॉस-ऑब्जेक्शन' को संदर्भित करता है, उस अनुसूची का अनुच्छेद 3 क्रॉस-ऑब्जेक्शन को संदर्भित नहीं करता है, लेकिन हमारी राय में इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है। यह केवल एक कलात्मक प्रारूपण है।

हाकम सिंह बनाम एम./एस. गैमन (इंडिया) लिमिटेड, [1971] 1 एस. सी. सी. 286 में, अपीलकर्ता इलाहाबाद उच्च न्यायालय के आदेश से व्यथित था जिसमें निर्देश दिया गया था कि मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की खंड 20 के तहत एक अधीनस्थ अदालत में दायर याचिका को उचित अदालत में प्रस्तुत करने के लिए उसे वापस कर दिया जाए। इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश को बरकरार रखा और अधिनियम की खंड 41 के संदर्भ में कहा कि संहिता पूरी तरह से उस अधिनियम के तहत कार्यवाही पर लागू होती है और अधिनियम के तहत अदालतों की अधिकार क्षेत्र एक पुरस्कार दाखिल करने के लिए एक कार्यवाही का मनोरंजन करने के लिए तदनुसार संहिता के प्रावधानों द्वारा शासित थी।

एन. जयराम रेड्डी और एन. आर. बनाम.राजस्व प्रभागीय अधिकारी और भूमि अधिग्रहण अधिकारी, कुरनूल, [1979] 3 एस. सी. सी. 578, यह न्यायालय प्रति-अपील और प्रति-आपत्तियों की प्रकृति पर विचार कर रहा था। इसमें कहा गया हैः

> "क्रॉस-अपील और क्रॉस-ऑब्जेक्शन एक ही उद्देश्य के लिए दो अलग-अलग उपाय प्रदान करते हैं और इसलिए आदेश 41, नियम 22 के तहत, ऐसे बिंदुओं के संबंध में क्रॉस-ऑब्जेक्शन को प्राथमिकता दी जा सकती है जिन पर वह पक्ष अपील को प्राथमिकता दे सकता था।यदि प्रति-आपत्तियों और प्रति-अपील की स्थिति ऐसी है तो नियम 3 और 4 के तहत उनके व्यवहार के मामले में भेदभाव को केवल इस आधार पर उचित नहीं ठहराया जा सकता है कि प्रति-आपत्तियों के मामले में वे एक ही रिकॉर्ड का हिस्सा हैं जबकि प्रति-अपील दो स्वतंत्र कार्यवाही हैं।"
>
> "यह कहना कि क्रॉस-अपील प्रत्येक से स्वतंत्र हैं, उस स्पष्ट स्थिति को नजरअंदाज करना है जिसे पक्ष क्रॉस-अपील में अपनाते हैं।परस्पर-अपीलों की परस्पर निर्भरता परस्पर-निर्भरता अपील और प्रति-आपत्तियों के समान है क्योंकि अपील और प्रति-आपत्तियों के मामले में अपील के संबंध में निर्णय प्रत्यक्ष रूप से प्रति-आपत्तियों में निर्णय पर प्रभाव डालेगा और इसके विपरीत।निर्विवाद रूप से एक प्रति-अपील में निर्णय सीधे दूसरे में निर्णय पर प्रभाव डालेगा क्योंकि दोनों अंततः एक ही डिक्री से उत्पन्न होते हैं।यह वास्तव में परस्पर-अपीलों की परस्पर निर्भरता है और परस्पर-अपीलों को अपील और परस्पर-आपत्तियों से अलग करना असंभव है।

इस न्यायालय ने तब कहा कि जिन मामलों में यह विचार लिया गया है कि प्रति-अपील में दृष्टिकोण अपील और प्रति-आपत्तियों में दृष्टिकोण से अलग है, वे किसी भी स्पष्ट कानूनी सिद्धांत पर आगे नहीं बढ़ते हैं। न ही उन्हें किसी भी प्रदर्शन द्वारा समझाया जा सकता है। कानूनी सिद्धांत लेकिन वास्तव में वे स्थापित कानूनी सिद्धांत के विपरीत हैं।

मेसर्स एच. एम. कमालुद्दीन अंसारी एंड कंपनी बनामभारत संघ और अन्य, [1983] 4 एस. सी. सी. 417, यह न्यायालय फिर से मध्यस्थता अधिनियम की खंड 41 के दायरे और दायरे पर विचार कर रहा था। इसमें कहा गया हैः

"तत्काल मामले में अपीलकर्ता ने यह रुख अपनाया कि मध्यस्थता सहित पक्षों के बीच कोई अनुबंध नहीं हुआ था। इसलिए, तत्काल मामले में पारित निषेधाज्ञा का आदेश मध्यस्थता कार्यवाही के उद्देश्य और संबंध में नहीं हो सकता है। इस कठिनाई का सामना करते हुए, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता, श्री एस. एन. कैकर ने खंड 41 के खंड (ए) पर यह मत व्यक्त किया कि खंड (ए) सिविल प्रक्रिया संहिता को न्यायालय के समक्ष सभी कार्यवाहियों और अधिनियम के तहत सभी अपीलों पर लागू करता है और इसलिए, अपीलकर्ता को निषेधाज्ञा आदेश प्राप्त करने के लिए संहिता के आदेश 39 को लागू करने का अधिकार था, भले ही खंड 41 के खंड (बी) की शर्तें संतुष्ट न हों। हमें डर है कि इस तर्क को स्वीकार नहीं किया जा सकता है।''

खंड 41 का खंड (ए) मध्यस्थता अधिनियम के तहत अदालत में कार्यवाही के लिए केवल सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रक्रियात्मक नियमों को लागू करता है। यह खंड न्यायालय को निषेधाज्ञा का आदेश पारित करने के लिए अधिकृत नहीं करता है।यह

शक्ति खंड 41 के खंड (बी) द्वारा प्रदान की गई है। इसलिए, शक्ति के स्रोत का पता खंड (ए) से नहीं लगाया जा सकता है। यदि श्री कैकर के तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है, तो अपील सी. पी. सी. की खंड 96,100 या 104 के तहत होगी, लेकिन मध्यस्थता अधिनियम स्वयं खंड 39 के तहत अपील का प्रावधान करता है।इसके अलावा, यदि खंड 41 का खंड (ए) निषेधाज्ञा का आदेश पारित करने के लिए व्यापक शक्तियां देता है, तो खंड 41 का खंड (बी) अनुचित हो जाएगा।

अलोपी नाथ और अन्य. वी.कलेक्टर, वाराणसी, [1986] सप.एस. सी. सी. 693 इस न्यायालय ने एक संक्षिप्त आदेश में कहाः

> "हमने पक्षों के लिए विद्वान अधिवक्ता को सुना है।संक्षिप्त प्रश्न उत्तर प्रदेश नगर पालिका अधिनियम, 1959 के प्रावधानों के तहत प्रति-आपत्ति की स्वीकार्यता के बारे में है, जहां मात्रा के खिलाफ अपील दायर की गई है और प्रतिवादी ने अपील को प्राथमिकता नहीं दी है। हमने अधिनियम की खंड 377,379 और 381 के प्रावधानों पर गौर किया है और यह विचार रखने के लिए इच्छुक हैं कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 नियम 22 का प्रावधान अधिनियम के प्रावधानों के साथ उतना ही असंगत होगा जितना कि एक अपील केवल एक प्रमाण पत्र या विशेष अनुमति द्वारा स्वीकार्य है जैसा कि खंड 381 (1) के प्रावधानों (ए) और (बी) में प्रदान किया गया है। यह तर्क देना मुश्किल है कि एक प्रति-आपत्ति एक अपील के अलावा कुछ और है जैसा कि आम तौर पर कानून में समझा जाता है।इन परिस्थितियों में, खंड 377 या अधिनियम की खंड 381 की उप-खंड (4) का लाभ उपलब्ध नहीं है।इसलिए अपील विफल हो जाती है।लागत के बारे में कोई आदेश नहीं है।"

आर. मैकडिल एंड कंपनी प्राइवेट लिमिटेड बनामगौरी शंकर सारदा अन्य अन्य। [1991] 2 एस. सी. सी. 548, न्यायालय के समक्ष प्रश्नों में से एक यह था कि क्या संहिता के आदेश 23 के प्रावधान अधिनियम की खंड 34 के तहत दायर मुकदमे पर रोक लगाने के मुकदमा आवेदन पर लागू होते हैं। इसने अधिनियम की खंड 41 का उल्लेख किया जिसमें प्रावधान किया गया था कि संहिता के प्रावधान न्यायालय के समक्ष सभी कार्यवाहियों पर निश्चित रूप से मध्यस्थता अधिनियम के प्रावधानों अन्य उसके तहत बनाए गए किसी भी नियम के अधीन लागू होंगे।इस न्यायालय ने उस मामले में मध्यस्थता कानून पर आर. एस. बचावत की एक टिप्पणी का उल्लेख किया जिसमें लेखक ने उच्च न्यायालय के विभिन्न ए निर्णयों के संदर्भ में बताया कि संहिता के कौन से प्रावधान अधिनियम के तहत कार्यवाही पर लागू होते हैं। इस न्यायालय के कुछ प्रारंभिक निर्णयों का भी संदर्भ दिया गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अधिनियम की खंड 41 को ध्यान में रखते हुए संहिता के आदेश 23 के प्रावधान लागू थे।

रमनभाई आशाभाई पटेल बनाम देवी अजितकुमार फुलसिंजी और अन्य, [1965] 1 एस. सी. आर. 712 में, इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए मुख्य प्रश्न यह था कि क्या अपीलकर्ता को लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की खंड 123 (3) के अनुसार एक भ्रष्ट प्रथा का दोषी कहा जा सकता है। जब प्रत्यर्थी के वकील ने दूसरे प्रत्यर्थी के नामांकन पत्र की वैधता के संबंध में उच्च न्यायालय के निष्कर्ष का उल्लेख किया, तो अपीलकर्ता के वकील सी ने इस प्रभाव पर प्रारंभिक आपत्ति जताई कि पहला प्रत्यर्थी निष्कर्ष की शुद्धता को चुनौती देने में सक्षम नहीं था क्योंकि उसने उससे अपील नहीं की थी।निर्णय में चर्चा के दौरान, इस न्यायालय ने कहाः

> "इसके अलावा हम सोचते हैं कि उसके समक्ष अपील पर विचार करते समय इस न्यायालय के पास अपील किए गए निर्णय से उत्पन्न होने

वाले सभी बिंदुओं पर निर्णय लेने की शक्ति है और यहां तक कि सिविल प्रक्रिया संहिता के ओ. एक्सएलआई, 22 जैसे स्पष्ट प्रावधान की अनुपस्थिति में में भी वह सुनवाई में अपनाई जाने वाली उचित प्रक्रिया तैयार कर सकता है।इस कमी को पूरा करने का इससे बेहतर कोई तरीका नहीं हो सकता कि सिविल प्रक्रिया संहिता जैसे सामान्य कानून के प्रावधानों का पालन किया जाए और उन प्रावधानों को अपनाया जाए जो उपयुक्त हों।हम इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं कि आम तौर पर जिस पक्ष के पक्ष में निर्णय की अपील की गई है, उसे उससे अपील करने के लिए विशेष अनुमति नहीं दी जाएगी। इसलिए न्यायाधीश पर विचार करने के लिए यह आवश्यक है कि इस न्यायाधीशालय को उचित मामलों में ऐसी स्थिति में रखे गए पक्ष को अनुमति देनी चाहिए!उन आधारों पर भी जो उस निर्णय में नकार दिए गए थे, अपने पक्ष में निर्णय का समर्थन करने के लिए।''

इस निर्णय के बाद, इस न्यायाधीशालय ने फिर से भानु कुमार शास्त्री बनाम मोहन लाल सुखाडिया और अन्य, [1971] 1 एस. सी. सी. 370 में, एक अपील को प्राथमिकता दिए बिना निष्कर्षों को चुनौती देने के सवाल पर कहा कि जी न्यायाधीश के विचारों के लिए आवश्यक है कि "इस अदालत को उचित मामलों में इस तरह की स्थिति में रखे गए पक्ष को अपने पक्ष में फैसले का समर्थन करने की अनुमति देनी चाहिए, उन आधारों पर भी जो उस फैसले में नकारात्मक हैं।"

हालाँकि, उपरोक्त दोनों मामले ऐसे मामले नहीं हैं जहाँ न्यायालय प्रति-आपत्ति के दायरे और सार पर विचार कर रहा था।

हम उच्च न्यायालयों के दो निर्णयों का भी उल्लेख कर सकते हैं-एक पटना उच्च न्यायालय का और दूसरा कलकत्ता उच्च न्यायालय का।रामसरय 9. बनाम बिभीसन सिन्हा, ए. आई. आर. (1950) काल में कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक खण्ड पीठ। 3 72, इस आपत्ति पर विचार कर रहा था कि हालांकि बंगाल धन ऋणदाता अधिनियम की खंड 38 (3) के तहत अपील का वैधानिक अधिकार दिया गया है, लेकिन प्रति-आपत्ति दायर करने का कोई अधिकार नहीं दिया गया है और यदि कोई वादकारी उक्त अधिनियम की खंड 38 के तहत किसी भी अदालत के फैसले से व्यथित है तो उसका उपाय अपील दायर करना है।उच्च न्यायालय ने इस तर्क को नकार दिया और कहाः

"यह देखा जाना चाहिए कि धारा 38, बंगाल धन-ऋणदाता अधिनियम द्वारा, अपील का अधिकार स्पष्ट शब्दों में दिया गया है।खंड 38 की उप-खंड (3) द्वारा, उस खंड के तहत एक घोषणा एक अपील, यदि कोई हो, के अधीन होनी चाहिए, जैसे कि यह न्यायालय की डिक्री हो। उस खंड के तहत अपील का अधिकार एक स्थापित न्यायालय, अर्थात् जिला न्यायाधीश के न्यायालय को दिया जाता है। ऐसी अपील को विनियमित करने की प्रक्रिया के बारे में उप-धारा में कुछ भी स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है।हमारे विचार में, जहां जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील की प्रक्रिया के बारे में स्पष्ट रूप से कुछ भी नहीं कहा गया है, कानून यह सूचित करेगा कि अपील पर उस न्यायालय की सामान्य प्रक्रिया लागू होगी। अपील की सामान्य प्रक्रिया यह है कि प्रतिवादी को प्रति-आपत्ति दर्ज करने का अधिकार है और इसलिए यह बिल्कुल स्पष्ट है कि प्रतिवादी को प्रति-आपत्ति दर्ज करने का अधिकार है।

बिहार राज्य विद्युत बोर्ड बनाम खालसा ब्रदर्स, आकाशवाणी (। 988) पटना 304, एक प्रभाग।पटना उच्च न्यायालय की पीठ ने एल. एम. शर्मा, जे. (उस समय उनके स्वामी के रूप में) द्वारा से बोलते हुए कहाः

> "सर्वोच्च न्यायालय के मामले लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 और कलकत्ता मामले के तहत बंगाल धन ऋणदाता अधिनियम के तहत उत्पन्न हुए। इन मामलों में की गई टिप्पणियाँ उस सिद्धांत का समर्थन करती हैं जिस पर श्री चटर्जी भरोसा कर रहे हैं। जहाँ तक मध्यस्थता अधिनियम का संबंध है, एक प्रति-आपत्ति की स्थिरता के पक्ष में दृष्टिकोण अधिक मजबूत प्रतीत होता है क्योंकि अधिनियम की धारा 41 में कहा गया है कि अधिनियम के प्रावधानों और अधिनियम के तहत बनाए गए नियमों के अधीन, सिविल प्रक्रिया संहिता अदालत के समक्ष सभी कार्यवाही और अधिनियम के तहत सभी अपीलों पर लागू होगी। सिविल प्रक्रिया संहिता के अनुप्रयोग के साथ कोई असंगत प्रावधान प्रतीत नहीं होता है।अदालत का अब तक का निर्णय जो वादी-प्रतिवादी के खिलाफ गया है, धारा 39 के तहत स्पष्ट रूप से अपील योग्य है और इसलिए, मैं मानता हूं कि क्रॉसऑब्जेक्शन बनाए रखने योग्य है।"

जबकि कलकत्ता मामले में बंगाल धन ऋणदाता अधिनियम में मध्यस्थता अधिनियम की खंड 41 जैसा कोई प्रावधान नहीं था।पटना का मामला स्वयं मध्यस्थता अधिनियम के तहत था।जैसा कि हम वर्तमान में देखेंगे कि पटना मामला अच्छा कानून नहीं बनाता है।

इन निर्णयों और अधिनियम की खंड 41 और संहिता के आदेश 41 नियम 22 के प्रावधानों की जांच से, हमारे विचार में, निम्नलिखित सिद्धांत सामने आते हैंः

(1) अपील एक मौलिक अधिकार है।यह अधिनियम की रचना है।अपील करने का अधिकार तब तक मौजूद नहीं है जब तक कि इसे विशेष रूप से प्रदान नहीं किया जाता है।

(2) क्रॉस आपत्ति एक अपील की तरह है।इसमें एक अपील के सभी गुण हैं।यह ज्ञापन के रूप में दायर किया जाता है और संहिता के आदेश 41 के नियम 1 के प्रावधान, जहां तक ये अपील का ज्ञापन के रूप और सामग्री से संबंधित हैं, क्रॉसऑब्जेक्शन पर भी लागू होते हैं।

(3) अदालती शुल्क अपील का ज्ञापन पर इस तरह से प्रति-आपत्ति पर देय होता है।निर्धन व्यक्ति द्वारा की गई अपीलों से संबंधित प्रावधान प्रति-आपत्ति पर भी लागू होते हैं।

(4) यहां तक कि जहां अपील वापस ले ली जाती है या चूक के लिए खारिज कर दी जाती है, फिर भी प्रति-आपत्ति की सुनवाई और निर्धारण किया जा सकता है।

(5) यद्यपि प्रत्यर्थी ने अपील नहीं की है, वह किसी अन्य आधार पर डिक्री का समर्थन कर सकता है, लेकिन यदि वह इसे संशोधित करना चाहता है, तो उसे डिक्री पर प्रति-आपत्ति दर्ज करनी होगी जो आपत्तियां वह अपील दायर करके पहले ले सकता था। आपत्ति दायर करने का समय जो अपील की प्रकृति का है, उसे अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित दिन के नोटिस की सेवा के बाद एक महीने के लिए बढ़ा दिया जाता है। अपील की तरह इस समय को भी न्यायालय द्वारा बढ़ाया जा सकता है।

(6) क्रॉस-ऑब्जेक्शन और कुछ नहीं बल्कि एक अपील है, उस पर एक क्रॉस-अपील है।ऐसा हो सकता है कि प्रत्यर्थी निर्णय और डिक्री या आदेश को स्वीकार करके

पूरे मुकदमे को शांत करना चाहता था, भले ही वह आंशिक रूप से उसके हित के खिलाफ हो।हालाँकि, जब दूसरे पक्ष ने एक अपील अधिनियम दायर करके इसे चुनौती दी, तो प्रतिवादी को प्रति-आपत्ति के माध्यम से अपील दायर करने का दूसरा मौका दिया, यदि वह अभी भी निर्णय और डिक्री या आदेश से व्यथित महसूस करता है।

वर्तमान मामले में, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, प्रत्यर्थी ने उच्च न्यायालय में अधिनियम की खंड 39 के तहत कोई अपील दायर नहीं की, जो उसे स्वीकार है जब निचली अदालत द्वारा 18 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के अधिनिर्णय को घटाकर 12 प्रतिशत प्रति वर्ष कर दिया गया था। अधिनियम की खंड 41 केवल प्रक्रियात्मक प्रकृति की है।यदि अधिनियम की खंड 39 के तहत प्रति-आपत्ति का कोई अधिकार नहीं दिया गया है, तो इसे अधिनियम की खंड 41 में नहीं पढ़ा जा सकता है। क्रॉस-ऑब्जेक्शन दाखिल करना प्रक्रियात्मक प्रकृति का नहीं है। अधिनियम की खंड 41 केवल यह निर्धारित करती है कि संहिता की प्रक्रिया अधिनियम की खंड 39 के तहत अपील पर लागू होगी। इसलिए, हमारी राय है कि प्रत्यर्थी द्वारा प्रति-आपत्ति बनाए रखने योग्य नहीं थी और उच्च न्यायालय ने अन्यथा अभिनिर्धारित करने और ब्याज के अधिनिर्णय को प्रति वर्ष 18 प्रतिशत पर बहाल करने और इस प्रकार, निचली अदालत की डिक्री में हस्तक्षेप करने में सही नहीं था।

इसलिए, हम उस अधिनिर्णय को अलग रखेंगे जो संदर्भ की तारीख से पहले की अवधि के लिए प्रत्यर्थी को देय राशि पर 15 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के रूप में हर्जाना देता है। हम आगे निचली निचली अदालत के आदेश के अनुसार 12 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के अधिनिर्णय को बहाल करेंगे।

अपीलें आंशिक रूप से सफल होती हैं। उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपील की गई है जिसे उपरोक्त सीमा तक उलट दिया जाता है।लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

ए. क्यू. अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल सुवास की सहायता से अनुवादक द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उददेश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उददेश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उददेश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।